उक्कस्सपदे उक्कस्सपदं जहण्णपदे जहण्णपदं त्ति वुत्तं होदि । खविदकम्मंसिय-खविद-गुणिद-घोलमाणाणं उक्कड्डुणादो एदस्स उक्कड्डुणा बहुगी । तेसिं चेव तिण्ण-मोकड्डुणादो एदेणोकड्डिज्जमाणदव्वं थोवं ति उत्तं होदि । गुणिदकम्मंसियओकड्डिज्ज-माणदव्वादो तेणेव उक्कड्डिज्जमाणदव्वं बहुगमिदि किण्ण भण्णदे ? ण, विसोहिअद्धाए तहाणुवलंभादो । एइंदिएसु णाणावरणुक्कस्सट्ठिदिबंधो सागरोवमस्स तिण्णिसत्तभा-गमेत्तो । तेण बंधसमयादो एत्तियमेत्ते काले गदे पयदसमयपबद्धस्स सव्वे परमाणू परिसदंति । तदो णत्थि उक्कड्डुणाए पओजणमिदि ? ण, सागरोवमतिण्णिसत्तभाग-मेत्ते काले अदिक्कंते पयदसमयपबद्धस्स ण सव्वे कम्मक्खंधा गलंति, उक्कड्डुणाए वड्ढाविदट्ठिदिसंतत्तादो । तं पि कुदो णव्वदे ? बेसागरोवमसहस्सेहि ऊणियं कम्मट्ठिदिमच्छिदो त्ति सुत्तण्णहाणुववत्तीदो । जदि एवं तो अणंतकाल--

---

' उक्कस्सपदे ' से ' उक्कस्सपदं ' और ' जहण्णपदे ' से ' जहण्णपदं ' ऐसी प्रथमा विभक्तिका अभिप्राय है । क्षपितकर्मांशिक जीवके क्षपित घोलमान और गुणित घोलमान कर्मोंके उत्कर्षणसे इसका उत्कर्षण बहुत है । और उन्हीं तीनके अपकर्षणसे इसके द्वारा अपकर्षित किया जानेवाला द्रव्य थोडा है, यह उसका फलितार्थ है ।

शंका-- गुणितकर्मांशिकके अपकर्षणमाण द्रव्यसे उसके ही द्वारा उत्कर्षमाण द्रव्य बहुत है, ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान-- नहीं क्योंकि, विशुद्धिकालमें वैसा नहीं पाया जाता ।

शंका-- एकेन्द्रियोंमें ज्ञानावरणका उत्कृष्ट स्थितिबन्ध एक सागरोपमके सात भागोंमेंसे तीन भाग प्रमाण होता है । इसलिये बन्धसमयसे लेकर इतने कालके बीतनेपर प्रकृत समयप्रबद्धके सब परमाणु निर्जीर्ण हो जाते हैं । इस कारण प्रकृतमें ऐसे उत्कर्षणसे कुछ प्रयोजन नहीं है ?

समाधान-- नहीं. सागरोपमके सात भागोंमेंसे तीन भाग मात्र कालके बीतनेपर प्रकृत समयप्रबद्धके सब कर्मस्कन्ध नहीं गलते, क्योंकि, उत्कर्षण द्वारा उनका स्थिति-सत्त्व बढा लिया जाता है ।

शंका-- वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान-- ' दो हजार सागरोपमोंसे कम कर्मस्थिति प्रमाण काल तक रहा ' यह सूत्र अन्यथा बन नहीं सकता, अतः जाना जाता है कि स्थितिसत्त्व बढा लिया जाता है ।

शंका-- यदि ऐसा हो तो अनन्त काल तक उत्कर्षण कराकर संचयका क्यों नहीं

मुक्कड्डाविय✲ किण्ण संचओ घेप्पदे ? ण, कम्मक्खंधाणं तेत्तियमेत्तकालमुक्कड्डुणसत्तीए अभावादो। तं पि कुदो णव्वदे ? वत्तिकम्मट्ठिदिअणुसारिणी सत्तिकम्मट्ठिदि त्ति वयणादो। बहुसो बहुसो बहुसंकिलेसं गदो त्ति सुत्तादो चेव ट्ठिदिबंधबहुत्तमुक्कड्डुणाबहुत्तं च सिद्धं, तदो ✲णिरत्थयमिदं सुत्तमिदि ? होदि णिरत्थयं जदि कसायमेत्तमुक्कड्डुणाए कारणं, किंतु तिव्वमिच्छत्तं✲ अरहंत-सिद्ध-बहुसुदाइरियच्चासणा✲ तिव्वकसाओ च उक्कड्डुणाकारणं। तेण ण णिरत्थयमिदं सुत्तं।

अधवा ' उवरिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स ' एदस्स सुत्तस्स एवमत्थपरूवणा कायव्वा। तं जहा– बज्झमाणुक्कड्डिज्जमाणपदेसग्गं णिसिंचमाणो गुणिदकम्मंसिओ अंतरंगकारणसहाओ पढमाए ट्ठिदीए थोवं णिसिंचदि, बिदियाए विसेसाहियं, तदियाए विसेसाहियं, एवं

ग्रहण किया जाता ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, कर्मस्कन्धोंकी उतने काल तक उत्कर्षणशक्तिका अभाव है।

शंका— वह भी किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान— ' व्यक्त अवस्थाको प्राप्त हुई कर्मस्थिति और शक्तिरूप कर्मस्थितिका अनुसरण करनेवाली शक्ति रूप कर्मस्थिति होती है ' इस वचनसे जाना जाता है।

शंका— ' बहुत बहुत बार संक्लेशको प्राप्त हुआ ' इस सूत्रसे ही स्थिति-बन्धकी अधिकता और उत्कर्षणकी अधिकता सिद्ध है, अतः यह सूत्र निरर्थक है ?

समाधान— यदि कषाय मात्र ही उत्कर्षणका कारण होता तो वह सूत्र निरर्थक होता। परन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि, तीव्र मिथ्यात्व व अरहंत, सिद्ध, बहुश्रुत एवं आचार्यकी अत्यासना अर्थात् आसादना और तीव्र कषाय उत्कर्षणका कारण है। इस कारण यह सूत्र निरर्थक नहीं है।

अथवा ' उपरिम स्थितियोंके निषेकका ' इस सूत्रके अर्थका इस प्रकार कथन करना चाहिये। यथा– बध्यमान और उत्कर्षमाण प्रदेशाग्रको निक्षिप्त करता हुआ गुणित-कर्मांशिक जीव अन्तरंग कारण वश प्रथम स्थितिमें थोडे प्रक्षिप्त करता हैं। द्वितीय स्थितिमें विशेष अधिक प्रक्षिप्त करता है। तृतीय स्थितिमें विशेष अधिक प्रक्षिप्त करता

✲ अ-आ-का प्रतिषु ' मुक्कडुणाविय ' इति पाठः।

✲ अ-का–सप्रतिषु ' तदो तण्णिरत्थय ', आप्रतौ ' तदो ताणिरत्थय ' मप्रतौ ' तदो ण णिरत्थय-' इति पाठः। ✲ अ–प्रतौ ' मिच्छत्त ' इति पाठः।

✲ पंचेव अत्थिकाया छज्जीवणिकाय महव्वया पंच। पवयणमाउ-पयत्था तेतीसच्चासणा भणिया॥ मूला. २, १८.

विसेसाहियकमेण णिसिंचदि जा उक्कस्सट्ठिदि त्ति। एसा णिसेयरचणा गुणिदकम्मंसियस्स होदि त्ति कधं णव्वदे ? एदम्हादो चेव सुत्तादो। ण च पमाणं पमाणंतरमवेक्खदे, अणवत्थापसंगादो।

पदेसबंधविण्णासेण विणा उक्कड्डुणापदेसरचणाए इदं सुत्तं किण्ण उच्चदे ? ण, बंधाणुसारिणीए उक्कड्डुणाए पुधपदेसविण्णासाणुववत्तीदो। पदेसविण्णासविसेसट्ठमहोदूण सेस पुरिसोकड्डुक्कड्डुणाहिंतो गुणिदकम्मंसिओकड्डुक्कड्डणाणं त्थोवबहुत्त(1)पदुप्पायणट्ठमिदं सुत्तं किण्ण भवे? ण, बहुसो बहुसो बहुसंकिलेसं गदो(2) त्ति सुत्तादो चेव एदस्स अत्थस्स सिद्धीदो। ण च तित्थयरादीणमासादणालक्खणमिच्छत्तेण विणा तिव्वकसाओ होदि, अणुवलंभादो।

है। इस प्रकार उत्कृष्ट स्थितिके प्राप्त होने तक विशेष अधिकके क्रमसे प्रक्षेप करता है।

शंका— यह निषेकरचना गुणितकर्मांशिक जीवके होती है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान— इसी सूत्रसे जाना जाता है। और एक प्रमाण दूसरे प्रमाणकी अपेक्षा नहीं करता, क्योंकि, ऐसा माननेपर अनवस्था दोषका प्रसंग आता है।

शंका— यह सूत्र बंधनेवाले प्रदेशोंकी रचनाका निर्देश नहीं करता, किन्तु उत्कर्षणको प्राप्त होनेवाले प्रदेशोंकी रचनाका निर्देश करता है; ऐसा व्याख्यान क्यों नहीं करते ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, उत्कर्षण बन्धका अनुसरण करनेवाला होता है, इसलिये उसमें दूसरे प्रकारसे प्रदेशोंकी रचना नहीं बन सकती।

शंका— प्रदेशविन्यासविशेषके लिये न होकर शेष पुरुषोंके अपकर्षण और उत्कर्षणकी अपेक्षा गुणितकर्मांशिकके अपकर्षण और उत्कर्षणके अल्पबहुत्वको बतलानेके लिये यह सूत्र क्यों नहीं हो सकता ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, बहुत बहुत बार बहुत संक्लेशको प्राप्त हुआ ' इस सूत्रसे उस अर्थकी सिद्धि हो जाती है। और तीर्थंकरादिकोंकी आसादना रूप मिथ्यात्वके विना तीव्र कषाय होती नहीं, क्योंकि, वैसा पाया नहीं जाता। तथा इस प्रकारकी कषाय

(1) अ-आ-काप्रतिषु '-णाबं थोवबहुत्त ' इति पाठः।   (2) प्रतिषु ' कदो ' इति पाठः।

ण च एवंविहो कसाओ तिव्वुउक्कड्डुण*ट्ठिदिबंधाणमणिमित्तो, एदासिं णिक्कारणत्तप्पसंगादो । तदो तिव्वसंकिलेसो विलोमपदेसविण्णासकारणं, मंदसंकिलेसो अणुलोमविण्णासकारणमिदि घेत्तव्वं । किंफला इमा पदेसरचणा ? बहुकम्मक्खंधसंचयफला । संकिलेस-विसोहीहिंतो अणुलोमो चेव पदेसविण्णासो किण्ण जायदे ? ण, विरूद्धाणमेक्ककज्जकारित्तविरोहादो । एसो उच्चारणाइरियअहिप्पाओ परूविदो । एदेण किं सिद्धं ? पच्चक्खाणजहण्णसंतकम्मियजीवम्हि मिच्छत्तस्स सगजहण्णादो णिरयगदीए असंखेज्जभागब्भधियत्तं× सिद्धं ।

भूदबलिपादाण पुण अहिप्पाओ विलोमविण्णासस्स गुणिदकम्मंसियत्तमणुलोमविण्णासस्स खविदकम्मंसियत्तं† कारणं, ण संकिलेस---विसोहीओ । पंचिंदियाणं सण्णीणं पज्जत्ताणं

स्थितिउत्कर्षण और स्थितिबन्धकी निमित्त न हो सो भी नहीं है, क्योंकि वैसा होनेपर उनके निष्कारण होनेका प्रसंग आता है । इसलिये तीव्र संक्लेश विलोम रूपसे प्रदेशविन्यासका कारण है और मंदसंक्लेश अनुलोम रूपसे प्रदेशविन्यासका कारण है, ऐसा ग्रहण करना चाहिये ।

शंका– इस प्रदेश रचनाका क्या फल है ?

समाधान– बहुत कर्मस्कंधोंका संचय करना ही इसका फल है ।

शंका– संक्लेश और विशुद्धि इन दोनोंसे अनुलोम रूपसे ही प्रदेशविन्यास होता है, ऐसा क्यों नहीं मानते ?

समाधान– नहीं, क्योंकि, विरुद्ध कारणोंसे एक कार्य होता है, ऐसा माननेमें विरोध आता है । यह उच्चारणाचार्यका अभिप्राय कहा है ।

शंका– इससे क्या सिद्ध होता है ?

समाधान– इससे त्यागके बलसे जघन्य सत्कर्मको प्राप्त हुए जीवके मिथ्यात्वका जो अपना जघन्य सत्त्व प्राप्त होता है उससे नरकगतिमें उसका सत्त्व असंख्यातवां भाग अधिक सिद्ध होता है ।

किन्तु भूतबलि भट्टारकके अभिप्रायसे विलोम विन्यासका कारण गुणितकर्मांशिकत्व और अनुलोम विन्यासका कारण क्षपितकर्मांशिकत्व है, न कि संक्लेश और विशुद्धि ।

शंका– पंचेंद्रिय संज्ञी पर्याप्त जीवोंके ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय

---

* प्रतिषु ' कसाओ त्ति उक्कड्डुण ' इति पाठः । × प्रतिषु ' भवियत्तं ' इति पाठः ।
† अ-आप्रत्योः ' खविदकम्मसमयत्तं ' इति पाठः ।

णाणावरणीय-दंसणावरणीय-वेयणीय-अंतराइयाणं तिण्गिवाससहस्समाबाधं मोत्तूण जं पढमसमए पदेसग्गं णिसित्तं तं बहुगं, जं बिदियसमए णिसित्तं पदेसग्गं तं विसेहहीणं। एवं णेदव्वं जावुक्कस्सेण तीसं सागरोवमकोडाकोडीओ त्ति कालविहाणे उक्कस्स-ठिदीए वि अणुलोमपदेसविण्णासदंसणादो। एदेण कालविहाणसुत्तुद्दिट्ठपदेसविण्णासेण कधमेदं वक्खाणं ण बाहिज्जदे ? ण, गुणिद-घोलमाणादिविसए वट्टमाणेण सावका-सेण कालसुत्तेण एदस्स वक्खाणस्स बाहाणुववत्तीदो। उच्चारणाए व भुजगारकाल-ब्भंतरे चेव गुणिदत्तं✿ किण्ण उच्चदे ? ण, अप्पदरकालादो गुणिदभुजगारकालो बहुगो त्ति वुवदेसमवलंबिय एदस्स सुत्तस्स पउत्तीदो।

बहुसो बहुसो उक्कस्साणि जोगट्ठाणाणि गच्छदि❀ ॥ १२ ॥

बहुसो उक्कस्सजोगट्ठाणगमणे को लाहो ? बहुपदेसागमणं। कुदो ? जोगादो

और अन्तराय कर्मके तीन हजार वर्ष प्रमाण आबाधाको छोडकर जो प्रथम समयमें प्रदेशाग्र निषिक्त होता है वह बहुत है। जो द्वितीय समयमें प्रदेशाग्र निषिक्त होता है वह विशेष हीन है। इस प्रकार उत्कृष्ट रूपसे तीस कोडाकोडि सागरोपम तक ले जाना चाहिये। इस प्रकार कालविधानमें उत्कृष्ट स्थितिका भी अनुलोमक्रमसे प्रदेशविन्यास देखा जाता है। अतः इस कालविधानसूत्रमें कहे गये प्रदेशविन्याससे यह व्याख्यान कैसे नहीं बाधित होगा ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, गुणित घोलमान आदिके विषयमें आये हुए काल-सूत्रसे इस व्याख्यानका बाधा जाना सम्भव नहीं है।

शंका— उच्चारणके समान भुजगारकालके भीतर ही गुणितत्व क्यों नहीं कहते ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, 'अल्पतरकालसे भुजगार काल बहुत है' इस उपदेशका अवलम्बन करके वह सूत्र प्रवृत्त हुआ है।

बहुत बहुत बार उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त होता है ॥ १२ ॥

शंका— बहुत बार उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त करनेमें क्या लाभ है ?

समाधान— उत्कृष्ट योगस्थानोंके द्वारा बहुत प्रदेशोंका आगमन होता है, क्योंकि

✿ काप्रतौ 'गुणिदव्वं' इति पाठः। ❀ क. प्र. २-७५.

पदेसो बहुगो आगच्छदि त्ति वयणादो । एदं सुत्तं सामण्णविसयत्तिण आउअ-बंधकालं मोत्तूण अण्णत्थ पयट्टदे ।

बहुसो बहुसो बहुसंकिलेसपरिणामो भवदि[⊛] ॥ १३ ॥

किमट्ठं बहुसो बहुसो बहुसंकिलेसपरिणामाणं णिज्जदे ? बहुदव्वुक्कड्डणट्ठ-मुक्कस्सट्ठिदिबंधट्ठं च । उक्कस्सट्ठिदी चेव किमट्ठं बंधाविज्जदे ? हेट्ठिल्लगो-उच्छाणं सुहुमत्तविहाणट्ठं उवरि दूरमुक्खित्ताणं कम्मक्खंधाणं उवसामणा-णिका-चणाक[✡]रणेहि ओकड्डणाणिवारणट्ठं च ।

एवं संसरिदूण बादरतसपज्जत्तएसुववण्णो[*] ॥ १४ ॥

एदेण विहाणेण कम्मक्खंधाणं संचयकरणेण एइंदिएसु विगयतसट्ठिदिं कम्मट्ठिदिं

योगसे बहुत प्रदेश आता है, ऐसा वचन है ।

यह सूत्र सामान्यको विषय करता है अर्थात् उत्सर्गका व्याख्यान करनेवाला है, इसलिये वह आयुके बन्धकालको छोडकर अन्यत्र प्रवृत्त होता है ।

बहुत बहुत बार बहुत संक्लेश रूप परिणामवाला होता है ॥ १३ ॥

शंका— बहुत बहुत बार बहुत संक्लेश रूप परिणामोंको क्यों प्राप्त कराया जाता है ?

समाधान— बहुत द्रव्यका उत्कर्षण करानेके लिये और उत्कृष्ट स्थितिका बन्ध करानेके लिए बहुत बहुत बार बहुत संक्लेश रूप परिणामोंको प्राप्त कराया जाता है ।

शंका— उत्कृष्ट स्थिति ही किसलिये बंधायी जाती है ?

समाधान— अधस्तन गोपुच्छोंकी सूक्ष्मताके विधानके लिये और ऊपर दूर उत्क्षिप्त कर्मस्कन्धोंके उपशामना व निकाचना करणों द्वारा अपकर्षणका निवारण करनेके लिये उत्कृष्ट स्थिति बंधायी जाती है ।

इस प्रकार परिभ्रमण करके बादर त्रस पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ ॥ १४ ॥

इस पूर्वोक्त विधिसे कर्मस्कन्धोंका संचय करता हुआ एकेन्द्रियोंमें त्रसस्थितिसे

⊛ क. प्र. २-७५.

✡ प्रतिषु '-णिकाचणाकारणेहि ' इति पाठः ।

* बायरतसेसु तक्कालमेवमंते य सत्तमखिईए । सव्वलहुं पज्जत्तो जोग-कसायाहिओ बहुसो ॥ क. प्र. २-७६.

संसरिदूण बादरतसपज्जत्तएसु उववण्णो। तसणिद्देसो थावरपडिसेहफलो। थावरत्तं किमिदि पडिसिज्झदे ? थावरजोगादो असंखेज्जगुणेण तसुक्कस्सजोगेण कम्मसंकलणट्ठं थावरकम्मट्ठिदीदो संखेज्जगुणट्ठिदीसु कम्मक्खंधे विरलिय गोवुच्छाण सुहुमत्तविहाणट्ठमुक्कडिदूण दोहि करणेही ओकड्डुणाणिराकरणट्ठं च। पज्जत्तणिद्देसो अपज्जत्तपडिसेहफलो। किमट्ठमपज्जत्त✽भावो पडिसिज्झदे ? तिविहअपज्जत्तजोगेहिंतो असंखेज्जगुणेहि तिविह✿पज्जत्तजोगेहि कम्मसंकलणट्ठं सुहुमणिसेगट्ठं उवसामणा–णिकाचणेहि ओकड्डुणापडिसेहट्ठं च। बादरणिद्देसो सुहुमत्तपडिसेहफलो। थावरपडिसेहेणेव सुहुमत्तं पडिसिद्धमण्णत्थ सुहुमाणमभावादो त्ति उत्ते–ण, सुहुमणामकम्मोदयजणिदसुहुमत्तेण विणा विग्गहगदीए वट्टमाणतसाणं सुहुम–

रहित कर्मस्थिति प्रमाण काल तक परिभ्रमण करके वादर त्रस पर्याप्तकोंमें उत्पन्न हुआ। सूत्रमें त्रस शब्दके निर्देशका फल स्थावरोंका प्रतिषेध करना है।

शंका– इस प्रकार स्थावरोंका प्रतिषेध किसलिये किया जाता है ?

समाधान– स्थावरयोगसे असंख्यातगुणे त्रसोंके उत्कृष्ट योग द्वारा कर्मोका संचय करनेके लिये स्थावरोंकी कर्मस्थितियोंसे संख्यातगुणी कर्मस्थितियोंमें कर्मस्कंधोंका विरलन करके गोपुच्छोंकी सूक्ष्मताका विधान करनेके लिये, तथा उत्कर्षण करके दोनों करणों द्वारा अपकर्षणका निराकरण करनेके लिये स्थावरोंका प्रतिषेध किया गया है।

पर्याप्तकोंके निर्देशका फल अपर्याप्तकोंका निषेध करना है।

शंका– अपर्याप्तभावका प्रतिषेध किसलिये किया जाता है ?

समाधान– अपर्याप्तकोंके तीन प्रकारके योगोंकी अपेक्षा असंख्यातगुणे तीन प्रकारके पर्याप्तकोंके योगों द्वारा कर्मका संचय करनेके लिये, अधस्तन निषेकोंकी सूक्ष्म रूपसे रचना करनेके लिये और उपशामना एवंनिकाचना करण द्वारा अपकर्षणका प्रतिषेध करनेके लिये अपर्याप्तकोंका प्रतिषेध किया गया है।

बादर शब्दके निर्देशका प्रयोजन सूक्ष्मताका प्रतिषेध करना है।

शंका– स्थावरका प्रतिषेध करनेसे ही सूक्ष्मताका प्रतिषेध हो जाता है, क्योंकि सूक्ष्म जीव और दूसरी पर्यायमें नहीं पाये जाते ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, यहांपर सूक्ष्म नामकर्मके उदयसे जो सूक्ष्मता उत्पन्न

✽ प्रतिषु 'असंखेज्जगुणतिविह-' इति पाठः।　　✿ अ-आ-सप्रतिषु 'मुप्पज्जत्त' इति पाठः।

त्तब्भुवगमादो। कधं ते सुहुमा ? अणंताणंतविस्ससोवचएहि उवचियओरालिय-णोकम्मक्खंधादो विणिग्गयदेहत्तादो। किमट्ठं सुहुमत्तं पडिसिज्झदे ? जोगवड्ढि-णिमित्तं णोकम्ममिदि जाणावणट्ठं पज्जत्तकालवड्ढावणट्ठं च। एदं मज्झदीवयं, तेण सव्वत्थ कम्मट्ठिदीए विग्गहाभावो दट्ठव्वो।

पज्जत्तापज्जत्तएसु उप्पज्जणसंभवे संते पढमं पज्जत्तएसु चेव किमट्ठं उप्पाइदो ? एसो पाएण पज्जत्तेसु चेव उप्पज्जदि, णो अपज्जत्तएसु त्ति✡ जाणावणट्ठं। एसो अत्थो भवावासेण चेव परूविदो, पुणो किमट्ठमेत्थ उत्तो ? तस्सेव अत्थस्स दिढीकरणट्ठं♣

होती है उसके विना विग्रहगतिमें वर्तमान त्रसोंकी सूक्ष्मता स्वीकार की गई है।

शंका– वे सूक्ष्म कैसे हैं ?

समाधान– क्योंकि, उनका शरीर अनन्तानन्त विस्रसोपचयोंसे उपचित औदा-रिक नोकर्मस्कन्धोंसे रहित है, अतः वे सूक्ष्म हैं।

शंका– सूक्ष्मताका प्रतिषेध किसलिये किया जाता है ?

समाधान– योगवृद्धिका निमित्त नोकर्म है, इस बातको जतलानेके लिये तथा पर्याप्तकालको बढानेके लिये उसका प्रतिषेध किया गया है।

यह सूत्र मध्यदीपक है, अतः सर्वत्र कर्मस्थितिमें विग्रहगतिका अभाव है यह समझना चाहिये।

शंका– पर्याप्तक व अपर्याप्तक इन दोनोंमें ही उत्पन्न होनेकी सम्भावना होनेपर पहिले पर्याप्तकोंमें ही किसलिये उत्पन्न कराया है ?

समाधान– यह प्रायः पर्याप्तकोंमें ही उत्पन्न होता है, अपर्याप्तकोंमें उत्पन्न नहीं होता; इस बातको जतलानेके लिये पहिले पर्याप्तकोंमें ही उत्पन्न कराया है।

शंका– यह अर्थ भवावासके निरूपण द्वारा ही कहा जा चुका है, उसे फिर यहां किसलिये कहा गया है ?

समाधान– उसी अर्थको दृढ करनेके लिये यहां उसे फिरसे कहा है।

✡ अप्रतौ 'अपज्जत्तएसु त्ते'. आ-का-सप्रतिषु 'अपज्जत्तएसु मुत्ते' इति पाठः।

♣ प्रतिषु 'दिट्ठीकरणटठं, 'मप्रतौ 'दडीकरणट्ठं' इति पाठः।

बादरतसपज्जत्तएसु उजुगदीए उक्कस्सजोगेण तप्पाओग्गुक्कस्सकसाएण च उप्पण्ण-पढमसमए अंतोकोडाकोडीए ठिदिं बंधदि । एइंदिएसु बद्धसमयपबद्धे आबाधं मोत्तूण तिस्से उवरि उक्कड्डमाणो किं सव्वे सममुक्कड्डिज्जंति✡ आहो अण्णहा इदि उत्ते वुच्चदे- कम्मट्ठिदिआदिमसमयपबद्धकम्मपोग्गलक्खंधा अंतोमुहुत्तूणतसट्ठिदिमुक्कड्डि-ज्जंति, एत्तियमेत्तसत्तिट्ठिदिसेसादो । बिदियसमयपबद्धो तत्तो जाव समयोत्तरट्ठिदी ता उक्कड्डिज्जदि, तस्स समयोत्तरसत्तिट्ठिदिविसेसादो । एवं सव्वे समयपबद्धा सम-योत्तरकमेणुक्कड्डिज्जंति । जस्स समयपबद्धस्स सत्तिट्ठिदी वट्टमाणबंधट्ठिदि❋समाणा सो समयपबद्धो वट्टमाणबंधचरिमट्ठिदि त्ति उक्कड्डिज्जदि । एसो समयपबद्धो कम्मट्ठिदीए केत्तियमद्धाणं चडिदूण पबद्धो ? कम्मट्ठिदिपढमसमयप्पहुडि अंतोमुहुत्तू-णतसट्ठिदिविसुद्धवट्टमाणबंधट्ठिदिमेत्तं चढिदूण पबद्धो । एदम्हादो उवरि समय✿पब-द्धाणमुक्कड्डणा एदस्साणंतरादीदसमयपबद्धस्स उक्कड्डणाए तुल्ला ।

बादर त्रस पर्याप्तकोंमें ऋजुगति, उत्कृष्ट योग और उसके योग्य उत्कृष्ट कषायसे उत्पन्न होनेके प्रथम समयमें अन्तःकोडाकोडि प्रमाण स्थितिको बांधता है ।

शंका— एकेन्द्रियोंमें बांधे हुए समयप्रबद्धोंका आबाधाको छोडकर उसके ऊपर उत्कर्षण करता हुआ क्या सबका एक साथ उत्कर्षण करता है अथवा अन्य प्रकारसे ?

समाधान— इस प्रकार पूछनेपर उत्तर देते हैं- कर्मस्थितिके प्रथम समयमें बांधे हुए कर्म-पुद्गलस्कन्धोंका अन्तर्मुहूर्त कम त्रसस्थिति काल प्रमाण उत्कर्षण किया जाता है, क्योंकि, इनकी इतनी शक्तिस्थिति शेष है । द्वितीय समयमें बांधे हुए समयप्रबद्धका उससे एक समय अधिक त्रसस्थितिकाल प्रमाण उत्कर्षण किया जाता है, क्योंकि, उसकी एक समय अधिक शक्तिस्थिति शेष है । इस प्रकार आगेके सब समयप्रबद्धोंका एक एक समय अधिकके क्रमसे उत्कर्षण किया जाता है । जिस समयप्रबद्धकी शक्तिस्थिति वर्तमानमें बंधे हुए कर्मकी स्थितिके समान है उस समय-प्रबद्धका वर्तमानमें बंधे हुए कर्मकी अन्तिम स्थिति तक उत्कर्षण किया जाता है ।

शंका— यह समयप्रबद्ध कर्मस्थितिका कितना काल जानेपर बांधा गया है ?

समाधान— कर्मस्थितिके प्रथम समयसे लेकर अन्तर्मुहूर्त कम त्रसस्थितिसे रहित वर्तमान समयप्रबद्धकी स्थिति मात्र चढकर बांधा गया है ।

इससे आगेके समयप्रबद्धोंका उत्कर्षण इसके अनन्तर अतीत समयप्रबद्धके उत्क-र्षणके समान है ।

✡ अप्रतौ 'समुक्कड्डि', काप्रतौ 'सममुक्कड्डि' इति पाठः ।

❋ प्रतिषु '-वट्टमाणखंडट्ठिदि-' इति पाठः ।

✿ अ-आ-काप्रतिषु 'उवरिमसमय-' इति पाठः ।

तत्थ य संसरमाणस्स बहुआ पज्जत्तभवा, थोवा अपज्जत्त-भवा ॥ १५ ॥

एदेण भवावासो परूविदो । एदस्सत्थो पुव्वं व परूवेदव्वो । एइंदिएसु परूविदाणं छण्णमावासयाणं* पुणो परूवणा किमट्ठं कीरदे ? एइंदियेसु परूविदछावासया☼ चेव तसकाइएसु वि होंति णो अण्णे इदि जाणावणट्ठं ।

दीहाओ पज्जत्तद्धाओ रहस्साओ अपज्जत्तद्धाओ ॥ १६ ॥

एदेण अद्धावासो⊗ परूविदो ? सेसं सुगमं ।

जदा जदा आउगं बंधदि तदा तदा तप्पाओग्गजहण्णएण जोगेण बंधदि ॥ १७ ॥

वहां परिभ्रमण करनेवाले उक्त जीवके पर्याप्तभव बहुत होते हैं और अपर्याप्तभव थोडे होते हैं ॥ १५ ॥

इस सूत्र द्वारा भवावासकी प्ररूपणा की गई है । इसका अर्थ पूर्व (सूत्र ७) के समान कहना चाहिये ।

शंका– एकेन्द्रियोंके कहे गये छह आवासोंका यहां फिरसे कथन किसलिये किया जाता है ?

समाधान– एकेन्द्रियोंमें जो छह आवास कहे हैं वे ही त्रसकायिकोंमें भी होते हैं, अन्य में नहीं; इस बातका ज्ञान करानेके लिये यहां फिरसे उनका कथन किया है ।

पर्याप्तकाल दीर्घ होता है और अपर्याप्तकाल थोडा होता है ॥ १६ ॥

इस सूत्र द्वारा अद्धावासकी प्ररूपणा की गई है । शेष कथन सुगम है ।

जब जब आयुको बांधता है तब तब उसके योग्य जघन्य योगसे बांधता है । १७ ।

---

* आवासाया हु भवअद्धाउअस्सं जोगसंकिलेसो य । ओकड्डुक्कड्डणया छच्चदे गुणिदकम्मंसे ॥

☼ प्रतिषु ' परूविदत्थावासया ' इति पाठः ।

⊗ आ–प्रतौ ' अद्धावसो ' इति पाठः ।

एदेण आउवावासो परूविदो । सेसं सुगमं ।

उवरिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स उक्कस्सपदे हेट्ठिल्लीणं ट्ठिदीणं णिसेयस्स जहण्णपदे ॥ १८ ॥

एदेण ओकड्डुक्कड्डणावासो परूविदो ओकड्डुक्कड्डणा-बंधाणं पदेसविण्णासावासो वा । सेसं सुगमं ।

बहुसो बहुसो उक्कस्साणि जोगट्ठाणाणि गच्छदि ॥ १९ ॥

एदेण जोगावासो परूविदो । सेसं सुगमं ।

बहुसो बहुसो बहुसंकिलेसपरिणामो भवदि ॥ २० ॥

एदेण संकिलेसावासो परूविदो । संकिलेसावासो पदेसविण्णासावासे किण्ण पददे ? ण(1) संकिलेसो पदेसविण्णासस्स कारणं, किंतु गुणिदकम्मंसियत्तं तक्कारणं; तेण ण तत्थ पददे ।

इस सूत्र द्वारा आयुआवासकी प्ररूपणा की गई है । शेष कथन सुगम है ।

उपरिम स्थितियोंके निषेकका उत्कृष्ट पद होता है और नीचेकी स्थितियोंके निषेकका जघन्य पद होता है ॥ १८ ॥

इस सूत्र द्वारा अपकर्षण–उत्कर्षणआवासका कथन किया गया है । अथवा अपकर्षण, उत्कर्षण और बंधके प्रदेशविन्यासावासका कथन किया गया है । शेष कथन सुगम है ।

बहुत बहुत बार उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त होता है ॥ १९ ॥

इसके द्वारा योगावासकी प्ररूपणा की गई है । शेष कथन सुगम है ।

बहुत बहुत बार संक्लेश परिणामवाला होता है ॥ २० ॥

इसके द्वारा संक्लेशावासकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका— संक्लेशावासका प्रदेशविन्यासावासमें अन्तर्भाव क्यों नहीं किया गया है ?

समाधान— संक्लेश प्रदेशविन्यासका कारण नहीं है, किन्तु गुणितकर्मांशिकत्व उसका कारण है । इस कारण उसका प्रदेशविन्यासावासमें अन्तर्भाव नहीं किया है ।

---

(1) प्रतिषु 'किण्ण पदे ण' इति पाठः ।

एवं संसरिदूण अपच्छिमे भवग्गहणे अधो सत्तमाए पुढवीए णेरइएसु उववण्णो॥ २१ ॥

अपच्छिमे भवे णेरइएसु किमट्ठं उप्पाइदो ? उक्कस्ससंकिलेसेण उक्कस्सट्ठिदिबंधणट्ठमुक्कस्सुक्कड्डणट्ठं च । उक्कड्डुणा णाम किं ? कम्मपदेसट्ठिदिवड्ढावणमुक्कड्डुणा । उदयावलियट्ठिदिपदेसा ण उक्कड्डिज्जंति । कुदो ? साभावियादो । उदयावलियबाहिरट्ठिदीओ सव्वाओ (ण) उक्कड्डिज्जंति । किंतु चरिमट्ठिदी आवलियाए असंखेज्जदिभागमइच्छिदूण आवलियाए असंखेज्जदिभागे उक्कड्डिज्जदि, उवरि ट्ठिदिबंधाभावादो । एसा जहण्णउक्कड्डुणा । पुणो उवरिमट्ठिदिबंधेसु अइच्छावणा वड्ढावेदव्वा जाव आवलियमेत्तं पत्ता त्ति । पुणो उवरि णिक्खेवो चेव वड्ढदि । अइच्छावणा--णिक्खेवाभावे णत्थि उक्कड्डुणा

इस प्रकार परिभ्रमण करके अन्तिम भवग्रहणमें नीचे सातवीं पृथिवीके नारकियोंमें उत्पन्न हुआ ॥ २१ ॥

शंका– अन्तिम भवमें नारकियोंमें किसलिये उत्पन्न कराया है ?

समाधान– उत्कृष्ट संक्लेशसे उत्कृष्ट स्थितिको बांधनेके लिये और उत्कृष्ट उत्कर्षण करानेके लिये वहां उत्पन्न कराया है ।

शंका– उत्कर्षण किसे कहते हैं ?

समाधान– कर्मप्रदेशोंकी स्थितिको बढाना उत्कर्षण कहलाता है ।

उदयावलिकी स्थितिके प्रदेशोंका उत्कर्षण नहीं किया जाता है, क्योंकि, ऐसा स्वभाव है । तथा उदयावलिके बाहरकी सभी स्थितियोंका उत्कर्षण (नहीं) किया जाता है । किन्तु चरम स्थितिके आवलीके असंख्यात भागको अतिस्थापना रूपसे स्थापित करके आवलिके असंख्यात बहु भागका उत्कर्षण होता है, क्योंकि ऊपर स्थितिबन्धका अभाव है । यह जघन्य उत्कर्षण है । पुनः उपरिम स्थितियोंमें अतिस्थापनाको आवलि मात्र प्राप्त होने तक बढाना चाहिये । फिर ऊपर निक्षेपकी ही वृद्धि होती है । अतिस्थापना और निक्षेपका अभाव होनेसे नीचे उत्कर्षण नही होता है । उत्कृष्ट अतिस्थापना एक

क. प्र. २–७६. प्रतिषु 'कम्मट्ठं' इति पाठः ।

अ प्रतौ 'सेव्वाओ' इति पाठः । सत्तग्गट्ठिदिबंधो आदिट्ठिदुक्कट्टणे जहण्णेण । आवलिअसंखभागं तेत्तियमेत्तेव णिक्खिवदि ॥ लब्धिसार. ६१.

प्रतिषु 'बंधावेदव्वा' इति पाठः । प्रतिषु '-मेत्तं पच्छा त्ति' इति पाठः ।

मुद्रित प्रतौ 'भावा' इति पाठः ।

हेट्ठा । उक्कस्सिया अइच्छावणा रूवाहियावलियूणआबाधमेत्ता ۞ । जहण्णिया आवलियपमाणा ✿ । पदेसाणं ठिदीणमोवट्टणा ओवक्कडुणा णाम । तिस्से अइच्छावणा ट्ठिदिखंडयादो अण्णत्थ आवलियमेत्ता । णवरि उदयावलियबाहिरट्ठिदीए समऊणावलियाए बेत्तिभागा अइच्छावणा । रूवाहियतिभागो णिक्खेवो । उवरिल्लीसु ट्ठिदीसु रूवाहियकमेण अइच्छावणा चेव वड्ढावेदव्वा जा उक्कस्सेण आवलियमेत्तं पत्ता त्ति । तत्तो उवरि रूवाहियकमेण ट्ठिदिं पडि णिक्खेवो वड्ढावेदव्वो ✲ । जदि एवं तो णेरइएसु चेव बहुवारं किण्ण उप्पाइदो ? ण एस दोसो, णेरइएसु चेव बहुवारमुप्पज्जदि, किंतु तत्थुप्पज्जणसंभवाभावे अण्णत्थुप्पत्तीदो । णेरइएसु उप्पज्जमाणो बहुवारं सत्तमपुढवीणेरइएसु चेव उप्पज्जदि, अण्णत्थ तिव्वसंकिलेस-दीहा-उवट्ठिदीणमभावादो ।

समय अधिक आवलिसे न्यून आबाधा प्रमाण है और जघन्य अतिस्थापना आवलि प्रमाण है ।

कर्मप्रदेशोंकी स्थितियोंके अपवर्तनका नाम अपकर्षण है । उसकी अतिस्थापना स्थितिकाण्डकको छोडकर अन्यत्र आवलि प्रमाण है । विशेषता इतनी है कि उदयावलिके बाहिरकी प्रथम स्थितिकी एक समय कम आवलिके दो त्रिभाग प्रमाण अतिस्थापना है और एक समय अधिक त्रिभाग प्रमाण निक्षेप है । इससे उपरिम स्थितियोंमें एक समय अधिकके क्रमसे उत्कृष्ट रूपसे आवलि प्रमाण अतिस्थापनाके प्राप्त होने तक अतिस्थापना बढाना चाहिये । उससे आगे एक समय अधिकके क्रमसे प्रत्येक स्थितिके प्रति निक्षेप बढाना चाहिये ।

शंका— यदि ऐसा है तो नारकियोंमें ही बहुत बार क्यों नहीं उत्पन्न कराया ?

समाधान— यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, वह नारकियोंमें ही बहुत बार उत्पन्न होता है । किन्तु उनमें उत्पत्तिकी सम्भावना न होनेपर अन्यत्र उत्पन्न होता है । नारकियोंमें उत्पन्न होता हुआ बहुत बार सप्तम पृथिवीके नारकियोंमें ही उत्पन्न होता है, क्योंकि, दूसरी पृथिवियोंमें तीव्र संक्लेश और दीर्घ आयुस्थितिका अभाव है ।

۞ प्रतिषु 'रूवाहियावलियाणआबाधमेत्ता' इति पाठः ।

✿ तत्तोदित्थावणगं वड्ढदि जावावली तदुक्कस्सं । उवरीदो णिक्खेवो वरं तु बंधिय ट्ठिदी जेट्ठं ॥ वोलिय बंधावलियं उक्कट्टिय उदयदो दु णिक्खिविय । उवरिमसमए बिदियावलिपढमुक्कट्टणे जादे ॥ तक्कालवज्जमाणे वरट्ठिदीए अदित्थियाबाहा । समयजुदावलियाबाहूणो उक्कस्सठिदिबंधो ॥ लब्धिसार ६२-६४.

✲ णिक्खेवमदित्थावणमवरं समऊणआवलितिभागं । तेणूणावलिमेत्तं बिदियावलियादिमणिसेगे ॥ एत्तो समऊणावलितिभागमेत्तो तु तं खु णिक्खेवो । उवरि आवलिवज्जिय सगट्ठिदी होदि णिक्खेवो ॥ लब्धिसार ५६-५७.

तेणेव पढमसमयआहारएण पढमसमयतब्भवत्थेण उक्कस्सेण जोगेण आहारिदो✡ ॥ २२ ॥

पढमसमयतब्भवत्थणिद्देसो बिदिय-तदियसमयतब्भवत्थपडिसेहफलो । जहण्ण-उववादजोगादिपडिसेहफलो उक्कस्सजोगणिद्देसो । कत्तारे एसा तइया । तेण आहारिदो पोग्गलक्खंधो त्ति संबंधो कायव्वो । एत्थ 'इव' सद्दो उवमट्ठो । जहा कम्मट्ठिदीए एसो जीवो पढमसमयआहारओ पढमसमयतब्भवत्थो च, विग्गहगदीए अभावादो । तहा एत्थ वि । तेण✽ सिद्धं तेण पढमसमयआहारएण पढमसमयतब्भवत्थेण उक्कस्सजोगेणेव आहारिदो, कम्मपोग्गलो गहिदो त्ति उत्तं होदि ।

उक्कस्सियाए वड्ढिए वड्ढिदो ॥ २३ ॥

बिदियसमयप्पहुडि एयंताणुवड्ढिजोगो होदि, समयं पडि असंखेज्जगुणाए सेडीए

प्रथम समयमें आहारक और प्रथम समयमें तद्भवस्थ होकर उसने उत्कृष्ट योगके द्वारा कर्मपुद्गलको ग्रहण किया ॥ २२ ॥

'प्रथम समय तद्भवस्थ' पदके निर्देशका फल द्वितीय व तृतीय समय तद्भवस्थका प्रतिषेध करना है । जघन्य उपपाद योग आदिका प्रतिषेध करनेके लिये 'उत्कृष्ट योग' पदका निर्देश किया है । कर्ता कारकमें यह तृतीया विभक्ति है : 'उसने पुद्गलस्कन्धको ग्रहण किया' ऐसा यहां सम्बन्ध करना चाहिये । यहां सूत्रमें 'इव' शब्द उपमार्थक है । आशय यह है कि जिस प्रकार कर्मस्थितिके भीतर सर्वत्र यह जीव प्रथम समयमें आहारक होता है और प्रथम समयमें तद्भवस्थ होता है, क्योंकि, इसके विग्रहगति नहीं होती । उसी प्रकार यहां नरकगतिमें भी जानना चाहिये । इससे सिद्ध हुआ कि प्रथम समयमें आहारक और प्रथम समयमें तद्भवस्थ जीवने उत्कृष्ट योगके द्वारा ही आहरण किया, अर्थात् कर्मपुद्गलको ग्रहण किया; यह उक्त कथनका तात्पर्य है ।

उत्कृष्ट वृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त हुआ ॥ २३ ॥

उत्पन्न होनेके द्वितीय समयसे लेकर एकान्तानुवृद्धि योग होता है, क्योंकि, प्रत्येक

✡ क. प्र. २, ७६. ✽ प्रतिषु 'वि ल्ले तेण' इति पाठः ।

वड्डिदंसणादो । तत्थ गुणगारो जहण्णुक्कस्स-तव्वदिरित्तभेएण तिविहो । तत्थ सेस-दोवड्ढीओ परिहरणट्ठमुक्कस्सियाए वड्ढीए वड्डिदो त्ति भणिदं, अण्णहा उक्कस्स-दव्वसंचयाणुववत्तीदो ।

अंतोमुहुत्तेण सव्वलहुं सव्वहि㉂ पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो ॥२४॥

पज्जत्तीणं समाणकालो एगसमयादिओ णत्थि त्ति परूवणट्ठमंतोमुहुत्तवयणं । तिस्से अजहण्णकालपडिसेहट्ठं सव्वलहुवयणं । एक्काए वि पज्जत्तीए असमत्ताए पज्जत्तएसु परिणामजोगो ण होदि त्ति जाणावणट्ठं सव्वाहि पज्जत्तीहि पज्जत्तयदो त्ति उत्तं । किं फलमिदं सुत्तं ? अपज्जत्तजोगादो पज्जत्तजोगो असंखेज्जगुणो त्ति जाणावणफलं ।

तत्थ भवट्ठिदी तेत्तीससागरोवमाणि ॥ २५ ॥

एदेण अद्धावासो❁ परूविदो । सेसं सुगमं ।

समयमें असंख्यात गुणित श्रेणि रूपसे योगकी वृद्धि देखी जाती है । वहां गुणकार जघन्य, उत्कृष्ट तद्व्यतिरिक्तके भेदसे तीन प्रकारका है । उनमेंसे शेष दो वृद्धियोंका परिहार करनेके लिए ' उत्कृष्ट वृद्धिसे वृद्धिको प्राप्त हुआ ' ऐसा कहा है, अन्यथा उत्कृष्ट द्रव्यका संचय नहीं बन सकता है ।

अन्तर्मुहूर्त द्वारा अति शीघ्र सभी पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ ॥ २४ ॥

पर्याप्तियोंकी पूर्णताका काल एक समय आदिक नहीं है, इस बातका कथन करनेके लिये सूत्रमें ' अन्तर्मुहूर्त ' पदका ग्रहण किया है । पर्याप्तियोंके अजघन्य कालका निषेध करनेके लिये ' सर्वलघु ' पद कहा है । एक भी पर्याप्तिके अपूर्ण रहनेपर पर्याप्तकोंमें परिणाम योग नहीं होता, इस बातके ज्ञापनार्थ ' सब पर्याप्तियोंसे पर्याप्त हुआ ' ऐसा कहा है ।

शंका— इस सूत्रका क्या प्रयोजन है ?

समाधान— अपर्याप्त योगसे पर्याप्त योग असंख्यातगुणा है, यह बतलाना इस सूत्रका प्रयोजन है ।

वहां भवस्थिति तेतीस सागरोपम प्रमाण है ॥ २५ ॥

इस सूत्र द्वारा अद्धावासकी प्ररूपणा की गई है । शेष कथन सुगम है ।

㉂ प्रतिषु ' ससव्वाहि ' इति पाठः । ❁ प्रतिषु ' अत्थावासो ' इति पाठः ।

आउअमणुपालेंतो⊗ बहुसो बहुसो उक्कस्साणि जोगट्ठाणाणि गच्छदि ॥ २६ ॥

एदेण जोगावासो परूविदो ।

बहुसो बहुसो बहुसंकिलेसपरिणामो भवदि ॥ २७ ॥

एदेण संकिलेसावासो परूविदो । सेसा तिण्णि आवासया किण्ण परूविदा ? ण ताव भवावासो एत्थ संभवदि, एक्कम्हि भवे✠ भव बहुत्ताभावादो । ण आउआवासो परूविज्जदि, तस्स जोगावासे अंतब्भावादो । कधं जोगबहुत्तमिच्छिज्जदि ? णाणावरणस्स बहुदव्वसंचयणिमित्तं । ण च आउअमुक्कस्सजोगेण बंधंतस्स णाणावरणस्सुक्कस्ससंचयो होदि, णाणावरणस्स बहुदव्वक्खयदंसणादो । तदो जोगावासादो चेव आउवं जहण्णजोगेण चेव बज्झदि

आयुका उपयोग करता हुआ बहुत बहुत बार उत्कृष्ट योगस्थानोंको प्राप्त होता है ॥ २६ ॥

इसके द्वारा योगावासकी प्ररूपणा की गई है ।

बहुत बहुत बार बहुत संक्लेश परिणामवाला होता है ॥ २७ ॥

इसके द्वारा संक्लेशावासकी प्ररूपणा की गई है ।

शंका– शेष तीन आवासोंकी प्ररूपणा क्यों नहीं की है ?

समाधान– यहां भवावास तो सम्भव नहीं है, क्योंकि, एक ही भवमें भवबहुत्वका अभाव है । आयु–आवासकी प्ररूपणा भी नहीं की जा सकती है, क्योंकि, उसका योगावासमें अन्तर्भाव हो जाता है ।

शंका– यहां योगबहुत्व क्यों स्वीकार किया जाता है ?

समाधान– ज्ञानावरणके बहुत द्रव्यका संचय करनेके लिये यहां योगबहुत्व स्वीकार किया जाता है ।

यदि कहा जाय कि आयुको उत्कृष्ट योग द्वारा बांधनेवालेके ज्ञानावरणका उत्कृष्ट संचय होता ही है सो भी बात नहीं है, क्योंकि, इस प्रकारसे तो ज्ञानावरणके बहुत द्रव्यका क्षय देखा जाता है और इसलिये योगावाससे आयु जघन्य योग द्वारा ही बंधती

⊗ प्रतिषु 'आउअमणुसापालेंतो' इति पाठः । ✠ प्रतिषु 'भवे भवे' इति पाठः ।

त्ति णव्वदे। तम्हा आउवावासो⊗ जोगावासे पविट्ठो त्ति पुध ण परूविदो। ण ओकड्डुक्कड्डणावासो वि परूविज्जदि, तस्स संकिलेसावासे अंतब्भावादो। एसा संगहणयविसया आवासयपरूवणा परूविदा एगभवविसया।

एवं संसरिदूण त्थोवावसेसे जीविदव्वए त्ति जोगजवमज्झस्सुवरिमंतोमुहुत्तद्धमच्छिदो☼ ॥ २८ ॥

एत्थ जोगस्स बीइंदियपज्जत्तसव्वजहण्णजोगट्ठाणपहुडि अवट्ठिदपक्खेउत्तरकमेण उक्कस्सपरिणामजोगट्ठाणे त्ति गदस्स पढमदुगुणवड्ढिअद्धाणादो दुगुण-चदुगुणादिकमेण गदगुणवड्ढिअद्धाणस्स करिकराकारस्स कधं जवभावो। जवाभावे ण तस्स मज्झं पि, असंते मज्झत्तविरोहादो त्ति? एत्थ उत्तरं वुच्चदे। तं जहा– बीइंदियपज्जत्तसव्वजहण्णपरिणामजोगट्ठाणमादिं कादूण जाव सण्णिपंचिंदियपज्जत्तउक्कस्सपरिणामजोगट्ठाणे त्ति घेत्तूण

है, यह जाना जाता है। अत एव आयुरावास योगावासमें अन्तर्भूत है, अतः उसकी पृथक् प्ररूपणा नहीं की है। तथा यहां अपकर्षण–उत्कर्षण–आवासकी भी प्ररूपणा नहीं की जाती है, क्योंकि, उसका संक्लेशावासमें अन्तर्भाव हो जाता है। यह संग्रहनयकी विषयभूत एक भवविषयक आवासकी प्ररूपणा कही है।

इस प्रकार परिभ्रमण करके जीवनके थोडा शेष रहनेपर योगयवमध्यके ऊपर अन्तर्मुहूर्त काल तक स्थित रहा ॥ २८ ॥

शंका— यहां द्वीन्द्रिय पर्याप्तके सबसे जघन्य योगस्थानसे लेकर अवस्थित प्रक्षेप उत्तर क्रमसे उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान तक प्राप्त हुआ जितना भी योग है, जो कि पहले दुगुणवृद्धि-स्थानसे दुगुणचतुर्गुण आदिके क्रमसे उत्तरोत्तर गुणवृद्धि रूप स्थानोंको प्राप्त है और जो हाथीके शुण्डादण्डके आकारका है, यह योग यवाकार कैसे हो सकता है। जब वह यवाकार नहीं है तब उसका मध्य भी सम्भव नहीं है, क्योंकि, जो वस्तु असत् है उसका मध्य माननेमें विरोध आता है?

समाधान— यहां उक्त शंकाका उत्तर कहते हैं। वह इस प्रकार है– द्वीन्द्रिय पर्याप्तके सबसे जघन्य परिणाम योगस्थानसे लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तके उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान तकके सब योगोंको ग्रहण करके एक पंक्तिमें स्थापित करनेपर उन

⊗ क प्रतौ 'आउववासो' इति पाठः।

☼ प्रतिषु 'मुहुत्तत्थमच्छिदो इति पाठः। जोगजवमज्झस्सुवरिं मुहुत्तमच्छिंतु जीवियवसाणे। तिचरिमदुचरिमसमए पूरित्तु कसायउक्कस्सं ॥ क. प्र. २–७७.

पंत्तियागारेण ट्ठइदे सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्तो जोगट्ठाणायामो होदि । तत्थ सव्व–जहण्णपरिणामजोगट्ठाणमादिं कादूण उवरि सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्तजोगट्ठाणाणि चदुसमयपाओग्गाणि । तदो उवरि सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्तजोगट्ठाणाणि पंचसमय-पाओग्गाणि । एवं परिवाडीए उवरि पुध पुध छ-सत्त-अट्ठसमयपाओग्गाणि जोगट्ठाणाणि सेडीए असंखेज्जदिभागमेत्ताणि । तदो उवरि जहाकमेण सत्त-छ❋-पंच-चदु-ति-दुसम-यपाओग्गाणि जोगट्ठाणाणि सेढीए असंखेज्जदिभागमेत्ताणि ।

एत्थ अट्ठसमयपाओग्गजोगट्ठाणाणि थोवाणि । दोसु वि पासेसु सत्तसमयपा–ओग्गजोगट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु छसमयपाओग्गाणि जोगट्ठा–णाणि असंखेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु पंचसमयपाओग्गाणि जोगट्ठाणाणि असं–खेज्जगुणाणि । दोसु वि पासेसु चदुसमयपाओग्गाणि जोगट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । उवरि तिसमयपाओग्गजोगट्ठाणाणि असंखेज्जगुणाणि । बिसमयपाओग्गाणि जोगट्ठा–णाणि असंखेज्जगुणाणि✡ । गुणगारो सव्वत्थ पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो ।

सब योगस्थानोंका आयाम जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग प्रमाण प्राप्त होता है । उनमेंसे सबसे जघन्य परिणाम योगस्थानसे लेकर आगेके जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र योगस्थान चार समय प्रायोग्य हैं । फिर इससे आगेके जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र योगस्थान पांच समय प्रायोग्य है । इस प्रकार परिपाटी क्रमसे आगेके पृथक् पृथक् छह सात व आठ समय प्रायोग्य योगस्थान प्रत्येक जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र हैं । फिर इससे आगे यथाक्रमसे सात, छह, पांच, चार, तीन व दो समय प्रायोग्य योगस्थान प्रत्येक जगश्रेणिके असंख्यातवें भाग मात्र है ।

यहां आठ समय प्रायोग्य योगस्थान थोडे हैं । दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित सात समय प्रायोग्य योगस्थान असंख्यातगुणे हैं । दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित छह समय प्रायोग्य योगस्थान असंख्यातगुणे हैं । दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित पांच समय प्रायोग्य योगस्थान असंख्यातगुणे हैं । दोनों ही पार्श्वभागोंमें स्थित चार समय प्रायोग्य योग–स्थान असंख्यातगुणे हैं । ऊपर तीन समय प्रायोग्य योगस्थान असंख्यातगुणे हैं । दो समय प्रायोग्य योगस्थान असंख्यातगुणे हैं । गुणकार सर्वत्र पल्योपमका असंख्यातवां भाग है ।

❋ प्रतिषु ' जहाकमेण सव्वत्थ पंच- ' इति पाठः ।

✡ अट्ठसमयस्स थोवा उभयदिसासु वि असंखसंगुणिदा । चउसमयो त्ति तहेव य उवरिं तिं-दुसमय–जोग्गाओ ।। गो. क. २४३.

तत्थ एदेसिं जोगट्ठाणाणं विसेसणभूदो कालो सगसंखं पडुच्च जवाकारो, मज्झे थूलो होदूण दोसु वि पासेसु कमहाणीए गमणादो । ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ७ ६ । ५ । ४ । ३ । २ । एदेहि विसेसिदजोगट्ठाणं पि एक्कारसविहं होदि, अण्णहा विसेसियत्ताणुववत्तीदो जोगादो पुधभूदकालाणुवलंभादो । जोगो चेव जवो जोग-जवो तस्स मज्झं (जोग) जवमज्झं, अट्ठसमइयजोगट्ठाणाणि त्ति उत्तं होदि । तस्स उवरि उवरिमजोगट्ठाणेसु सव्वजोगट्ठाणाणमसंखेज्जेसु भागेसु अंतोमुहुत्तद्धमच्छिदो । कुदो ? चत्तारिवड्ढि-हाणीणं संभवदंसणादो । चदुवड्ढि-हाणिकालो अंतोमुहुत्तमिदि कधं णव्वदे ? असंखेज्जगुणवड्ढि-हाणिकालो अंतोमुहुत्तं, सेसवड्ढि-हाणीणं कालो आवलियाए असंखेज्जदिभागो त्ति बंधसुत्तादो । किमट्ठं तत्थ अंतोमुहुत्तमच्छा-विदो ? जवमज्झादो उवरिमजोगाणं हेट्ठिमजोगेहिंतो बहुत्तुवलंभादो । जोगजव–

यहां इन योगस्थानोंका विशेषणभूत काल अपनी संख्याकी अपेक्षा यवाकार हो जाता है, क्योंकि, वह मध्यमें तो स्थूल है और दोनों ही पार्श्वभागोंमें क्रमसे हानि होती गई है ४ । ५ । ६ । ७ । ८ । ७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । इस प्रकार इन चार आदि समयोंसे विशेषित योगस्थान भी ग्यारह प्रकारका है, अन्यथा वह कालका विशेष नहीं बन सकता, क्योंकि, योगसे पृथग्भूत काल नहीं पाया जाता । यहां योगको ही यव कहा है और उसका मध्य (योग) यवमध्य कहलाता है । यवमध्यसे आठ समयवाले योगस्थान लिये जाते हैं, यह उक्त कथनका तात्पर्य है । उस यवमध्यके ऊपर नव योगोंके असंख्यात बहुभाग प्रमाण योगस्थानोंमें अन्तर्मुहुर्त काल तक स्थित रहा, क्योंकि, वहां चार वृद्धियां और चार हानियोंकी सम्भावना देखी जाती है ।

शंका– चार वृद्धियों और चार हानियोंका काल अन्तर्मुहूर्त है, यह किस प्रमाणसे जाना जाता है ?

समाधान– ' असंख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणहानिका काल अन्तर्मुहूर्त है तथा शेष वृद्धियों और शेष हानियोंका काल आवलीके असंख्यातवें भाग प्रमाण है ' इस बन्धसूत्रसे यह जाना जाता है कि चार वृद्धियों और चार हानियोंका काल अन्तर्मुहूर्त है ।

शंका– वहां अन्तर्मुहूर्त काल तक किसलिये स्थित कराया ?

समाधान– चूंकि यवमध्यसे आगेके योग पिछले योगसे बहुत पाये जाते हैं, अतः वहां अन्तर्मुहूर्त काल तक स्थित कराया है ।

विशेषार्थ– प्रति समय मन, वचन और कायके निमित्तसे जो आत्मप्रदेश–परिस्पंद होता है उसे योग कहते हैं और इनके स्थानोंको योगस्थान कहते है । योगस्थान तीन प्रकारके होते हैं–– उपपाद योगस्थान, एकान्तवृद्धि योगस्थान और परिणाम योगस्थान । भवके प्रथम समयमें स्थित जीवोंकी उपपाद योगस्थान होते हैं । इसके पश्चात्

मज्झादो एदस्स सुत्तस्स अत्थे भण्णमाणे दव्वट्ठियणयं पडुच्च जोगजवमज्झ-सण्णिदजीवजवमज्झादो उवरिमअद्धाणम्मि अंतोमुहुत्तध्दमच्छिदो त्ति किण्ण उच्चदे ? ण, जीवजवमज्झउवरिमअद्धाणम्मि हेट्ठिमअद्धाणादो विसेसाहियम्मि

शरीरपर्याप्तिके पूर्ण होने तक एकान्तवृद्धि योगस्थान होते हैं। यदि लब्ध्यपर्याप्त जीव होता है तो आयुके अन्तिम तीसरे भागको छोडकर उपपाद योगके बाद अन्यत्र एकान्तानु-वृद्धि योगस्थान होते हैं। इसके बाद शरीरपर्याप्तिके पूर्ण होनेके समयसे लेकर या लब्ध्यपर्याप्तकके अन्तिम तीसरे भागमें परिणाम योगस्थान होते हैं। ये परिणाम योगस्थान द्वीन्द्रिय पर्याप्तके जघन्य योगस्थानोंसे लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त जीवोंके उत्कृष्ट योगस्थानों तक क्रमसे वृद्धिको लिये हुए होते हैं। इनमें आठ समयवाले योगस्थान सबसे थोडे होते हैं। इनसे दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित सात समयवाले योगस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित छह समयवाले योगस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित पांच समयवाले योगस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इनसे दोनों पार्श्वभागोंमें स्थित चार समयवाले योगस्थान असं-ख्यातगुणे होते हैं। इनसे तीन समयवाले योगस्थान असंख्यातगुणे होते हैं और इनसे दो समयवाले योगस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। ये सब योगस्थान चार, पांच छह, सात, आठ, सात, छह, पांच, चार, तीन और दो समयवाले होनेसे ग्यारह भागोंमें विभक्त हैं, अतः समयकी दृष्टिसे इनकी यवाकार रचना हो जाती है। आठ समयवाले योगस्थान मध्यमें रहते हैं। फिर दोनों पार्श्वभागोंमें सात समयवाले योगस्थान प्राप्त होते हैं। फिर दोनों पार्श्वभागोंमें छह समयवाले योगस्थान प्राप्त होते हैं। फिर दोनों पार्श्वभागोंमें पांच समयवाले योगस्थान प्राप्त होते हैं। फिर दोनों पार्श्वभागोंमें चार समयवाले योगस्थान प्राप्त होते हैं। फिर आगेके भागमें क्रमसे तीन समय और दो समयवाले योगस्थान प्राप्त होते हैं। इनमेंसे आठ समयवाले योगस्थानोंकी यवमध्य संज्ञा है। यवमध्यसे पहलेके योगस्थान थोडे होते हैं और आगेके योगस्थान असंख्यातगुणे होते हैं। इन आगेके योगस्थानोंमें संख्यातभागवृद्धि, असंख्यातभागवृद्धि, संख्यातगुणवृद्धि और असंख्यातगुणवृद्धि ये चारों वृद्धियां तथा ये ही चारों हानियां सम्भव हैं। इसीसे इन योगस्थानोंमें उक्त जीवको अन्तर्मुहूर्त काल तक स्थित कराया है, क्योंकि, योगस्थानोंका अन्तर्मुहूर्त काल यहीं सम्भव है। (देखिये कर्मकाण्ड गा. २१८ आदि)

शंका— ' जोगजवमज्झादो- ' इस सूत्रका अर्थ कहते समय द्रव्यार्थिक नयकी अपेक्षा योगयवमध्य संज्ञावाले जीवमध्यसे आगेके स्थानमें अन्तर्मुहूर्त काल तक स्थित रहा, ऐसा क्यों नहीं कहते ?

समाधान— नहीं, क्योंकि, जीवयवमध्यका आगेका स्थान पिछले स्थानसे विशेष